



## Intelligentsia International Journal Of Multidisciplinary Research

### आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवाद : स्वरूप, विमर्श एवं समकालीन प्रासंगिकता

**राकेश कुमार ठाकुर<sup>1</sup>**

शोधछात्र

राजनीति विज्ञान विभाग

बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय, धनबाद

**डॉ जितेंद्र आर्यन<sup>2</sup>**

सहायक प्राध्यापक

राजनीति विज्ञान विभाग

बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय, धनबाद

#### सारांश

आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवाद एक महत्वपूर्ण वैचारिक एवं सामाजिक आंदोलन है, जिसका उद्देश्य लैंगिक असमानता, पितृसत्तात्मक संरचनाओं और सामाजिक भेदभाव को समाप्त कर महिलाओं के लिए समान अधिकार, स्वतंत्रता एवं गरिमापूर्ण जीवन सुनिश्चित करना है। भारतीय नारीवाद पश्चिमी अवधारणाओं का मात्र अनुकरण न होकर भारतीय समाज की विशिष्ट सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और ऐतिहासिक परिस्थितियों से विकसित एक बहुआयामी चिंतन है। इसका उद्भव उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधार आंदोलनों से हुआ, जिसमें स्त्री-शिक्षा, बाल विवाह, सती प्रथा और विधवा उत्पीड़न जैसी समस्याओं के समाधान पर विशेष बल दिया गया। सावित्रीबाई फुले, पंडिता रमाबाई और ताराबाई शिंदे जैसी विचारकों ने स्त्री-अधिकारों, शिक्षा तथा जाति एवं पितृसत्ता के अंतर्संबंधों को वैचारिक आधार प्रदान किया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी के नेतृत्व में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता ने नारीवादी चेतना को व्यापक सामाजिक स्वरूप प्रदान किया। भारतीय नारीवादी विमर्श में पितृसत्ता, जाति, वर्ग, धर्म, लैंगिक न्याय, संपत्ति अधिकार, घरेलू हिंसा तथा निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में महिलाओं की समान भागीदारी प्रमुख विषय रहे हैं। दलित नारीवाद ने जातिगत एवं लैंगिक उत्पीड़न के अंतर्संबंधों को रेखांकित किया, जबकि पारिस्थितिक नारीवाद ने महिलाओं, प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण संरक्षण के पारस्परिक संबंधों को स्पष्ट किया। समकालीन संदर्भ में कार्यस्थलों पर लैंगिक समानता, अवैतनिक घरेलू श्रम की मान्यता, डिजिटल सुरक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व भारतीय नारीवादी चिंतन के महत्वपूर्ण प्रश्न हैं। नारी शक्ति वंदन अधिनियम जैसे संवैधानिक प्रयास महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी से संबंधित विमर्श को नई दिशा प्रदान करते हैं। प्रस्तुत अध्ययन भारतीय नारीवाद के ऐतिहासिक विकास, वैचारिक स्वरूप, प्रमुख विमर्शों एवं समकालीन प्रासंगिकता का विश्लेषण करते हुए समावेशी लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और लैंगिक समानता की स्थापना में इसकी भूमिका को रेखांकित करता है।

कुंजी शब्द: भारतीय नारीवाद, पितृसत्ता, अंतर-अनुभागीयता, लैंगिक न्याय, पारिस्थितिक नारीवाद

#### प्रकाशन समयरेखा:

मूल पाण्डुलिपि प्राप्त – 08 जुलाई, 2026; सहकर्मी समीक्षण पूर्ण – 12 जुलाई, 2026; संशोधित पाण्डुलिपि प्राप्त – 14 जुलाई, 2026; स्वीकृत एवं प्रकाशित – 15 जुलाई, 2026

#### अनुशंसित संदर्भ

ठाकुर, आर. के. (2026). आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवाद : स्वरूप, विमर्श एवं समकालीन प्रासंगिकता. इंटेलेजेंट्सिया इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च, 2(3), 22 –33.

## परिचय

आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवाद एक महत्वपूर्ण वैचारिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विमर्श के रूप में विकसित हुआ है, जिसका मूल उद्देश्य पितृसत्तात्मक संरचनाओं को चुनौती देते हुए महिलाओं के लिए समानता, स्वतंत्रता, न्याय एवं गरिमापूर्ण जीवन सुनिश्चित करना है। भारतीय नारीवाद का विकास देश की विशिष्ट ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और औपनिवेशिक परिस्थितियों के बीच हुआ है। यह केवल लैंगिक असमानता तक सीमित न रहकर जाति, वर्ग, धर्म, परिवार तथा सामाजिक परंपराओं से उत्पन्न बहुआयामी विषमताओं का भी विश्लेषण करता है।

भारतीय नारीवादी चिंतन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधार आंदोलनों में दिखाई देती है। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर और ज्योतिराव फुले जैसे समाज सुधारकों ने सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा उत्पीड़न तथा स्त्री-शिक्षा से संबंधित समस्याओं को सामाजिक विमर्श का विषय बनाया। इसी काल में सावित्रीबाई फुले, पंडिता रमाबाई और ताराबाई शिंदे जैसी महिला विचारकों ने स्त्रियों की स्वतंत्रता, शिक्षा एवं सामाजिक अधिकारों के प्रश्नों को नई वैचारिक दिशा प्रदान की। ताराबाई शिंदे की रचना 'स्त्री-पुरुष तुलना' (1882) ने पितृसत्तात्मक व्यवस्था के दोहरे मानदंडों तथा स्त्रियों के प्रति सामाजिक भेदभाव की आलोचना प्रस्तुत की (उपाध्याय और यादव, 2026)।

बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन ने भारतीय नारीवादी चेतना को व्यापक राजनीतिक आधार प्रदान किया। महात्मा गांधी के नेतृत्व में संचालित सत्याग्रह और असहयोग आंदोलनों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी ने सार्वजनिक जीवन में उनकी भूमिका को विस्तार दिया। सरोजिनी नायडू, कमलादेवी चट्टोपाध्याय और अरुणा आसफ अली जैसी महिलाओं ने राजनीतिक नेतृत्व एवं राष्ट्रीय चेतना के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया (बासु, 1995)।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान में समानता, स्वतंत्रता और भेदभाव के निषेध संबंधी प्रावधानों ने महिला अधिकारों को संवैधानिक आधार प्रदान किया। इसके बावजूद सामाजिक व्यवहार में विद्यमान लैंगिक असमानता, जातिगत भेदभाव, आर्थिक निर्भरता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व की चुनौतियों ने नारीवादी विमर्श को निरंतर प्रासंगिक बनाए रखा है। समकालीन भारतीय नारीवाद इन समस्याओं के समाधान के साथ महिलाओं की स्वायत्तता, सामाजिक न्याय और समावेशी लोकतंत्र की स्थापना पर बल देता है। इस प्रकार भारतीय नारीवाद आधुनिक राजनीतिक चिंतन में समानता एवं सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है (चक्रवर्ती, 2018)।

## शोध के उद्देश्य एवं शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवादी विचारधारा के उद्भव, ऐतिहासिक विकास, वैचारिक स्वरूप, प्रमुख विमर्शों एवं समकालीन प्रासंगिकता का आलोचनात्मक अध्ययन करना है। इसके अंतर्गत भारतीय समाज की विशिष्ट सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों में महिलाओं की स्थिति, अधिकारों तथा लैंगिक न्याय से संबंधित प्रश्नों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवादी चेतना के ऐतिहासिक विकासक्रम का अध्ययन करना ।
2. समकालीन भारतीय परिप्रेक्ष्य में संवैधानिक प्रावधानों, महिला अधिकारों से संबंधित विधायी पहलों, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आर्थिक स्वायत्तता, डिजिटल सुरक्षा एवं पारिस्थितिक नारीवाद की प्रासंगिकता का विश्लेषण करना।

प्रस्तुत शोध सैद्धांतिक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। अध्ययन में आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन के अंतर्गत नारीवादी विचारधारा के ऐतिहासिक विकास, वैचारिक स्वरूप, प्रमुख विमर्शों तथा समकालीन प्रासंगिकता के अध्ययन हेतु गुणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। शोध मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनके माध्यम से भारतीय नारीवादी चिंतन के विविध आयामों का व्यवस्थित एवं आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है।

### नारीवाद: अर्थ, अवधारणा एवं सैद्धांतिक आधार

नारीवाद एक ऐसा विचार, दर्शन और सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन है, जो लैंगिक समानता की वकालत करता है। इसका मूल उद्देश्य समाज में व्याप्त उस व्यवस्था का विरोध करना है, जहाँ महिलाओं को केवल उनके लिंग के आधार पर पुरुषों की तुलना में दोयम दर्जे का नागरिक माना जाता है। नारीवाद का अर्थ पुरुषों से श्रेष्ठता स्थापित करना या उनसे विद्वेष रखना नहीं, बल्कि समाज के हर क्षेत्र में नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार, अवसर और गरिमा प्रदान करना है (रैना, 2017)।

नारीवाद की मूल अवधारणा समाज में स्थापित 'पितृसत्ता' की आलोचना पर टिकी है। इसके तहत माना जाता है कि स्त्री और पुरुष के बीच की असमानता प्राकृतिक या जैविक नहीं, बल्कि सामाजिक रूप से निर्मित है। सिमोन द बोउवा का प्रसिद्ध कथन "स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है" इस अवधारणा को स्पष्ट करता है, जो 'लिंग' (जैविक भिन्नता) और 'जेंडर' (समाज द्वारा निर्धारित भूमिकाएं) के अंतर को रेखांकित करता है। नारीवाद यह मांग करता है कि परिवार, श्रम विभाजन और वैधानिक संरचनाओं में महिला की स्वायत्तता और निर्णय लेने के अधिकार को मान्यता मिले।

नारीवादी चिंतन कई प्रमुख सैद्धांतिक धाराओं में विभाजित है, जिन्होंने अपने-अपने दृष्टिकोण से स्त्री मुक्ति का मार्ग प्रस्तुत किया:

- **उदारवादी नारीवाद** : यह धारा कानून, शिक्षा और राजनीतिक अधिकारों के माध्यम से व्यवस्था के भीतर सुधार और समान अवसर की मांग करती है (जैसे मैरी वोल्स्टनक्राफ्ट के विचार)।
- **मार्क्सवादी एवं समाजवादी नारीवाद** : यह महिलाओं के उत्पीड़न को पूंजीवाद और निजी संपत्ति की व्यवस्था से जोड़ती है। इसके अनुसार, घर के अवैतनिक श्रम और पूंजीवादी शोषण का अंत किए बिना लैंगिक समानता संभव नहीं है।

- **उग्र/आमूल नारीवाद :** यह पितृसत्ता को सबसे मूलभूत और व्यापक उत्पीड़न मानता है। यह 'व्यक्तिगत ही राजनीतिक है' का नारा देकर परिवार, विवाह और लैंगिक भूमिकाओं के पूर्ण पुनर्गठन की वकालत करता है।
- **उत्तर-आधुनिक एवं अश्वेत/दलित नारीवाद:** यह विविधता और 'इंटरसेक्शनैलिटी' पर बल देता है, जहाँ लिंग के साथ-साथ जाति, वर्ग और नस्ल के आधार पर होने वाले बहुस्तरीय शोषण को विश्लेषित किया जाता है।

### आधुनिक भारत में नारीवादी चिंतन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

आधुनिक भारत में नारीवादी चिंतन का विकास औपनिवेशिक शासन, सामाजिक सुधार आंदोलनों, राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम तथा संवैधानिक लोकतंत्र की स्थापना से जुड़ा हुआ है। भारतीय नारीवाद ने लैंगिक असमानता के साथ जाति, वर्ग, धर्म और सामाजिक परंपराओं से उत्पन्न स्त्री उत्पीड़न को भी अपने विमर्श का विषय बनाया। इसके ऐतिहासिक विकास को तीन प्रमुख चरणों में समझा जा सकता है।

- **उन्नीसवीं शताब्दी का समाज सुधार आंदोलन:** उन्नीसवीं शताब्दी में राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर और ज्योतिराव फुले जैसे समाज सुधारकों ने सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा उत्पीड़न तथा स्त्री-शिक्षा से संबंधित समस्याओं के समाधान हेतु प्रयास किए। इस काल में सावित्रीबाई फुले ने बालिकाओं एवं वंचित समुदायों की शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया। पंडिता रमाबाई ने विधवाओं की शिक्षा, पुनर्वास एवं आत्मनिर्भरता पर बल दिया। ताराबाई शिंदे ने अपनी रचना 'स्त्री-पुरुष तुलना' (1882) के माध्यम से पितृसत्तात्मक व्यवस्था के दोहरे मानदंडों तथा महिलाओं के प्रति सामाजिक भेदभाव की आलोचना की। इन प्रयासों ने भारतीय नारीवादी चिंतन को महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान किया (हार्ट, 1965)।
- **राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन एवं राजनीतिक चेतना:** बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन ने महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को व्यापक स्वरूप प्रदान किया। महात्मा गांधी के नेतृत्व में महिलाओं ने असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और नमक सत्याग्रह में सक्रिय भागीदारी निभाई। वर्ष 1917 में विमेंस इंडियन एसोसिएशन तथा 1927 में ऑल इंडिया विमेंस कॉन्फ्रेंस की स्थापना ने महिला अधिकारों के संगठित प्रयासों को गति प्रदान की। सरोजिनी नायडू, कमलादेवी चट्टोपाध्याय और राजकुमारी अमृत कौर जैसी महिलाओं ने राजनीतिक अधिकारों, शिक्षा तथा सामाजिक समानता के प्रश्नों को राष्ट्रीय विमर्श से जोड़ा।
- **स्वतंत्रता-उत्तर काल एवं संवैधानिक विकास:** स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान ने महिलाओं को समान नागरिक अधिकार एवं सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार प्रदान किया। डॉ. भीमराव आंबेडकर द्वारा प्रस्तुत हिंदू कोड बिल ने विवाह, तलाक और उत्तराधिकार संबंधी अधिकारों में सुधार का मार्ग प्रशस्त किया। वर्ष 1974 की 'टुवर्ड्स इकेलिटी' रिपोर्ट ने महिलाओं की वास्तविक सामाजिक-आर्थिक स्थिति और संवैधानिक समानता के बीच विद्यमान अंतर को

उजागर किया। इसके पश्चात नारीवादी आंदोलनों में घरेलू हिंसा, दहेज, श्रम अधिकार, जातिगत उत्पीड़न और राजनीतिक प्रतिनिधित्व जैसे प्रश्न प्रमुखता से उभरे। इस प्रकार भारतीय नारीवादी चिंतन सामाजिक सुधार से विकसित होकर लैंगिक न्याय, महिला स्वायत्तता और समावेशी लोकतंत्र का व्यापक वैचारिक आंदोलन बना।

## प्रमुख आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतकों के नारीवादी विचार

आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवादी चेतना के विकास में सावित्रीबाई फुले, ताराबाई शिंदे और पंडिता रमाबाई जैसी विचारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सावित्रीबाई फुले ने स्त्री-शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन एवं महिला सशक्तीकरण का प्रमुख माध्यम माना। उन्होंने ज्योतिराव फुले के साथ मिलकर बालिकाओं तथा वंचित समुदायों की शिक्षा के लिए कार्य किया और जातिगत एवं लैंगिक असमानता को चुनौती दी। ताराबाई शिंदे ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'स्त्री-पुरुष तुलना' (1882) में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के दोहरे नैतिक मानदंडों की आलोचना की। उन्होंने स्पष्ट किया कि समाज में समान आचरण के लिए महिलाओं को दोषी ठहराया जाता है, जबकि पुरुषों को सामाजिक संरक्षण प्राप्त होता है। उनके विचारों ने स्त्री उत्पीड़न को सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचनाओं से जोड़कर भारतीय नारीवादी चिंतन को वैचारिक आधार प्रदान किया। इसी क्रम में पंडिता रमाबाई ने अपनी कृति 'द हाई-कास्ट हिंदू वुमन' (1887) में उच्च जातीय हिंदू महिलाओं, विशेषकर बाल-विधवाओं की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण किया। उन्होंने शारदा सदन एवं मुक्ति मिशन जैसी संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं की शिक्षा, पुनर्वास तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता पर बल दिया। इन विचारकों ने महिलाओं की अधीनस्थ स्थिति को प्राकृतिक मानने के बजाय सामाजिक व्यवस्था और पितृसत्तात्मक मान्यताओं के परिणाम के रूप में प्रस्तुत किया।

राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने महिला अधिकारों एवं राजनीतिक सहभागिता के प्रश्न को व्यापक जन-आंदोलन से जोड़ा। गांधी महिलाओं की नैतिक शक्ति, आत्मबल और अहिंसात्मक प्रतिरोध की क्षमता पर विशेष बल देते थे। उनके नेतृत्व में महिलाओं ने असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन तथा नमक सत्याग्रह में सक्रिय भागीदारी निभाई, जिससे सार्वजनिक एवं राजनीतिक जीवन में उनकी उपस्थिति का विस्तार हुआ। गांधी ने बाल विवाह, पर्दा प्रथा और महिलाओं के प्रति सामाजिक भेदभाव का विरोध करते हुए स्त्री-शिक्षा तथा समान मानवीय गरिमा का समर्थन किया। हालांकि, कुछ नारीवादी आलोचकों के अनुसार, उनके चिंतन में मातृत्व, त्याग और सेवा जैसे पारंपरिक स्त्री गुणों पर विशेष बल महिलाओं की सामाजिक भूमिकाओं को सीमित करने की संभावना भी उत्पन्न करता है। इसी काल में सरोजिनी नायडू, कमलादेवी चट्टोपाध्याय और मुथुलक्ष्मी रेड्डी जैसी महिला नेत्रियों ने स्वतंत्रता आंदोलन के साथ महिला मताधिकार, शिक्षा, सामाजिक सुधार तथा राजनीतिक प्रतिनिधित्व के प्रश्नों को प्रमुखता प्रदान की। इस प्रकार राष्ट्रीय आंदोलन ने महिलाओं को सामाजिक सुधार की निष्क्रिय पात्रता से आगे बढ़ाकर स्वतंत्र राजनीतिक चेतना एवं सामूहिक नेतृत्व के अवसर प्रदान किए।

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में लैंगिक न्याय को जाति उन्मूलन, सामाजिक समानता एवं संवैधानिक अधिकारों से जोड़कर महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान

किया। उन्होंने जाति व्यवस्था के संरक्षण में अंतर्विवाह की भूमिका का विश्लेषण करते हुए स्पष्ट किया कि जातिगत संरचनाओं को बनाए रखने के लिए महिलाओं के विवाह संबंधी निर्णयों और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर सामाजिक नियंत्रण स्थापित किया जाता है। उनके चिंतन में महिलाओं की मुक्ति केवल कानूनी समानता तक सीमित नहीं थी, बल्कि सामाजिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक स्वायत्तता से भी संबंधित थी। स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री के रूप में उन्होंने हिंदू कोड बिल के माध्यम से विवाह, तलाक, उत्तराधिकार एवं संपत्ति संबंधी अधिकारों में लैंगिक समानता स्थापित करने का प्रयास किया। विधेयक को मूल स्वरूप में पारित कराने में उत्पन्न बाधाओं के बीच उन्होंने वर्ष 1951 में मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दिया। आंबेडकर के विचारों ने जाति और पितृसत्ता के अंतर्संबंधों को समझने के लिए महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान किया, जो समकालीन दलित नारीवादी विमर्श में विशेष रूप से प्रासंगिक है। इस प्रकार आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतकों के नारीवादी विचार सामाजिक सुधार, राजनीतिक सहभागिता, संवैधानिक समानता एवं जातिगत उत्पीड़न के प्रतिरोध के माध्यम से लैंगिक न्याय और समावेशी लोकतंत्र की अवधारणा को व्यापक स्वरूप प्रदान करते हैं (अम्बेडकर और कोड, 2022)।

## **भारतीय संविधान और नारीवादी दृष्टि**

भारतीय संविधान आधुनिक भारतीय नारीवादी चिंतन को विधिक एवं संस्थागत आधार प्रदान करता है। यह महिलाओं को समान नागरिक अधिकार, स्वतंत्रता, गरिमा एवं सामाजिक न्याय प्रदान करने के साथ ऐतिहासिक लैंगिक असमानताओं को दूर करने की संवैधानिक व्यवस्था स्थापित करता है। संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित न्याय, स्वतंत्रता, समानता एवं व्यक्ति की गरिमा के आदर्श महिलाओं को स्वतंत्र और समान नागरिक के रूप में मान्यता प्रदान करते हैं। मौलिक अधिकारों के अंतर्गत अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समानता एवं विधियों के समान संरक्षण की गारंटी देता है, जबकि अनुच्छेद 15(1) राज्य द्वारा लिंग सहित निर्दिष्ट आधारों पर भेदभाव का निषेध करता है। अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं एवं बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है, जिससे वास्तविक समानता स्थापित करने के लिए सकारात्मक उपायों को संवैधानिक आधार प्राप्त होता है। अनुच्छेद 16 लोक नियोजन में अवसर की समानता सुनिश्चित करता है। नारीवादी दृष्टिकोण से ये प्रावधान महिलाओं की नागरिक स्वतंत्रता, समान अवसर और सार्वजनिक जीवन में सहभागिता के महत्वपूर्ण आधार हैं (सिंह, 2006)।

राज्य के नीति-निदेशक तत्व महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तीकरण को व्यापक दिशा प्रदान करते हैं। अनुच्छेद 39(क) पुरुषों एवं महिलाओं को समान रूप से आजीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने तथा अनुच्छेद 39(घ) दोनों के लिए समान कार्य के समान वेतन के सिद्धांत पर बल देता है। अनुच्छेद 42 कार्य की न्यायसंगत एवं मानवीय दशाओं तथा प्रसूति सहायता की व्यवस्था करने का निर्देश देता है। यद्यपि नीति-निदेशक तत्व सीधे न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं, तथापि वे राज्य की विधायी एवं कल्याणकारी नीतियों के महत्वपूर्ण मार्गदर्शक हैं। इसके अतिरिक्त, 73वें एवं 74वें संविधान संशोधनों के माध्यम से अनुच्छेद 243D तथा 243T के अंतर्गत पंचायतों एवं नगरपालिकाओं में महिलाओं के लिए कम-से-कम एक-तिहाई सीटों का आरक्षण सुनिश्चित किया गया है। इन प्रावधानों ने स्थानीय

स्वशासन में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी एवं निर्णय-निर्माण के अवसरों को संवैधानिक आधार प्रदान किया है।

समकालीन संदर्भ में 106वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 2023 (नारी शक्ति वंदन अधिनियम) महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व से संबंधित एक महत्वपूर्ण संवैधानिक पहल है। इसके अंतर्गत लोकसभा, राज्य विधानसभाओं तथा राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली की विधानसभा में महिलाओं के लिए लगभग एक-तिहाई सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इसमें अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए भी आरक्षित सीटों के भीतर आरक्षण की व्यवस्था है। हालांकि, अधिनियम के मूल प्रावधानों के अनुसार आरक्षण का क्रियान्वयन संबंधित जनगणना के आँकड़ों के प्रकाशन के पश्चात परिसीमन प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है। वर्ष 2026 में इसके क्रियान्वयन की प्रक्रिया में परिवर्तन संबंधी विधायी प्रस्ताव भी प्रस्तुत किए गए (लावण्या, 2023)।

इस प्रकार भारतीय संविधान महिलाओं की औपचारिक समानता के साथ उनकी वास्तविक सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सहभागिता के विस्तार का आधार प्रदान करता है। नारीवादी दृष्टि से संवैधानिक प्रावधानों की सार्थकता उनके प्रभावी क्रियान्वयन, महिलाओं की स्वायत्तता तथा निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में समान भागीदारी सुनिश्चित करने से जुड़ी हुई है।

### **स्वतंत्रता के बाद भारतीय महिला आंदोलन और नारीवादी विमर्श**

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय महिला आंदोलन ने संवैधानिक समानता एवं विधायी सुधारों के साथ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में व्याप्त लैंगिक असमानताओं को चुनौती देने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रारंभिक दशकों में महिला अधिकारों का विमर्श मुख्यतः राज्य द्वारा संचालित कल्याणकारी योजनाओं एवं सामाजिक सुधारों पर केंद्रित रहा, किंतु समय के साथ महिलाओं ने स्वतंत्र संगठनों और जन-आंदोलनों के माध्यम से अपने अधिकारों के लिए संगठित संघर्ष प्रारंभ किया। भारतीय महिला आंदोलन के इस विकासक्रम को तीन प्रमुख चरणों में समझा जा सकता है (कुमारी और देवीदास 2025)।

#### **• प्रारंभिक चरण एवं नारीवादी चेतना का पुनर्जागरण (1950-1970 का दशक)**

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान ने महिलाओं को समान नागरिक अधिकार प्रदान किए, किंतु सामाजिक व्यवहार में पितृसत्तात्मक संरचनाओं, अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता और लैंगिक भेदभाव की समस्याएँ बनी रहीं। वर्ष 1974 में प्रकाशित 'टुवर्डस इकेलिटी' रिपोर्ट ने महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार एवं सामाजिक स्थिति से संबंधित असमानताओं को उजागर किया। इस रिपोर्ट ने संवैधानिक समानता और महिलाओं की वास्तविक सामाजिक स्थिति के मध्य विद्यमान अंतर को रेखांकित किया। इसके परिणामस्वरूप महिला अधिकारों से संबंधित विमर्श को नई दिशा मिली तथा स्वायत्त महिला संगठनों एवं आंदोलनों के विस्तार के लिए महत्वपूर्ण वैचारिक आधार तैयार हुआ।

#### **• कानूनी सुधार एवं महिलाओं के विरुद्ध हिंसा का प्रतिरोध (1970-1990 का दशक)**

इस अवधि में भारतीय महिला आंदोलन ने दहेज उत्पीड़न, बलात्कार, घरेलू हिंसा और कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न जैसे प्रश्नों को सार्वजनिक एवं राजनीतिक विमर्श के केंद्र में स्थापित किया। मथुरा बलात्कार मामले में वर्ष 1979 के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध महिला संगठनों के विरोध ने यौन हिंसा से संबंधित कानूनों में सुधार की मांग को व्यापक बनाया। इसके परिणामस्वरूप वर्ष 1983 में बलात्कार संबंधी आपराधिक कानूनों में महत्वपूर्ण संशोधन किए गए। इसी प्रकार दहेज हत्याओं एवं घरेलू उत्पीड़न के विरुद्ध आंदोलनों ने महिलाओं की सुरक्षा और कानूनी संरक्षण संबंधी प्रश्नों को प्रमुखता प्रदान की। वर्ष 1997 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विशाखा दिशानिर्देशों ने कार्यस्थलों पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न की रोकथाम के लिए महत्वपूर्ण विधिक आधार प्रस्तुत किया।

### • विविधता, अस्मिता एवं समकालीन नारीवादी विमर्श (1990 के बाद)

वर्ष 1990 के पश्चात भारतीय नारीवादी चिंतन में जाति, वर्ग, धर्म, क्षेत्र एवं सामुदायिक अस्मिता से संबंधित प्रश्नों को अधिक प्रमुखता प्राप्त हुई। दलित, बहुजन एवं आदिवासी महिला आंदोलनों ने मुख्यधारा के नारीवादी विमर्श में अपने विशिष्ट सामाजिक अनुभवों और बहुस्तरीय उत्पीड़न के प्रश्नों को सामने रखा। इन विमर्शों ने स्पष्ट किया कि महिलाओं की सामाजिक स्थिति को केवल लैंगिक आधार पर नहीं समझा जा सकता, बल्कि जातिगत भेदभाव, आर्थिक विषमता तथा सामाजिक वंचना के अंतर्संबंधों का विश्लेषण भी आवश्यक है। समकालीन दौर में महिला आंदोलन ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आर्थिक आत्मनिर्भरता, अवैतनिक घरेलू श्रम, डिजिटल सुरक्षा, शारीरिक स्वायत्तता और पर्यावरणीय न्याय जैसे मुद्दों को भी अपने विमर्श में सम्मिलित किया है। इस प्रकार स्वतंत्रता के बाद भारतीय महिला आंदोलन ने संवैधानिक अधिकारों की मांग से आगे बढ़कर सामाजिक न्याय, महिला स्वायत्तता और समावेशी लोकतंत्र की स्थापना से संबंधित व्यापक वैचारिक स्वरूप ग्रहण किया है।

### समकालीन चुनौतियाँ

आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवाद ने महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों, सामाजिक समानता एवं राजनीतिक सहभागिता को व्यापक वैचारिक आधार प्रदान किया है। इसके बावजूद भारतीय समाज में पितृसत्तात्मक संरचनाओं, आर्थिक विषमताओं, जातिगत भेदभाव तथा सामाजिक रूढ़ियों के कारण महिलाओं के समक्ष अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। समकालीन नारीवादी विमर्श इन चुनौतियों को केवल व्यक्तिगत समस्याओं के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं से संबंधित संरचनात्मक प्रश्नों के रूप में देखता है। इसकी प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैं—

- **पितृसत्तात्मक मानसिकता एवं लैंगिक रूढ़ियाँ:** भारतीय समाज में प्रचलित पितृसत्तात्मक मान्यताएँ महिलाओं की व्यक्तिगत स्वतंत्रता, शिक्षा, रोजगार एवं निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करती हैं। परिवार और सार्वजनिक जीवन में परंपरागत लैंगिक भूमिकाओं का निर्धारण महिलाओं की स्वायत्तता तथा समान अवसरों की प्राप्ति में बाधा उत्पन्न करता है (नायक और तबस्सुम 2024)।
- **महिलाओं के विरुद्ध हिंसा एवं उत्पीड़न:** घरेलू हिंसा, दहेज उत्पीड़न, यौन हिंसा तथा कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न महिलाओं की सुरक्षा और गरिमा से संबंधित गंभीर चुनौतियाँ हैं। नारीवादी चिंतन

का सिद्धांत 'व्यक्तिगत ही राजनीतिक है' परिवार और निजी जीवन में होने वाले उत्पीड़न को सामाजिक न्याय एवं सार्वजनिक उत्तरदायित्व से जोड़ता है (चुंडावत, 2026)।

- **शिक्षा एवं रोजगार में असमान अवसर:** शिक्षा के विस्तार के बावजूद महिलाओं के समक्ष उच्च शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण, व्यावसायिक अवसरों तथा रोजगार में निरंतरता से संबंधित बाधाएँ विद्यमान हैं। घरेलू उत्तरदायित्व, सामाजिक प्रतिबंध एवं संसाधनों तक असमान पहुँच उनकी आर्थिक स्वतंत्रता और व्यावसायिक उन्नति को प्रभावित करती है।
- **वेतन असमानता एवं आर्थिक निर्भरता:** समान कार्य के लिए समान वेतन के संवैधानिक सिद्धांत के बावजूद विभिन्न क्षेत्रों में लैंगिक वेतन-अंतर तथा रोजगार की असुरक्षा महत्वपूर्ण चुनौतियाँ हैं। असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं को कम पारिश्रमिक, सामाजिक सुरक्षा की कमी तथा सीमित आर्थिक अवसरों जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
- **राजनीतिक प्रतिनिधित्व की चुनौती:** स्थानीय स्वशासन में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था होने के बावजूद संसद, विधानसभाओं तथा उच्चस्तरीय निर्णय-निर्माण संस्थाओं में उनकी पर्याप्त एवं प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित करना एक महत्वपूर्ण प्रश्न बना हुआ है। राजनीतिक दलों में नेतृत्व के अवसर, चुनावी संसाधनों तक पहुँच तथा स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता भी इस विमर्श के प्रमुख विषय हैं।
- **ग्रामीण एवं आदिवासी महिलाओं की समस्याएँ:** ग्रामीण एवं आदिवासी महिलाओं के समक्ष शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका तथा प्राकृतिक संसाधनों तक पहुँच से संबंधित विशिष्ट चुनौतियाँ विद्यमान हैं। विस्थापन, भूमि अधिकारों की असुरक्षा तथा जल, जंगल और जमीन पर नियंत्रण में कमी उनकी आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं सांस्कृतिक पहचान को प्रभावित करती है। पारिस्थितिक नारीवाद इन समस्याओं को पर्यावरणीय न्याय एवं महिला अधिकारों के अंतर्संबंधों से जोड़कर देखता है।
- **दलित महिलाओं के समक्ष बहुस्तरीय भेदभाव:** दलित महिलाओं के अनुभवों में जाति, वर्ग और लिंग आधारित असमानताएँ परस्पर जुड़ी हुई हैं। जातिगत उत्पीड़न, सामाजिक बहिष्करण, आर्थिक वंचना तथा लैंगिक हिंसा उनके अधिकारों एवं अवसरों को प्रभावित करती हैं। दलित नारीवादी विमर्श इन विशिष्ट अनुभवों को केंद्र में रखते हुए सामाजिक न्याय की व्यापक अवधारणा प्रस्तुत करता है।
- **डिजिटल लैंगिक विभाजन एवं साइबर हिंसा:** डिजिटल युग में इंटरनेट, तकनीकी उपकरणों एवं डिजिटल साक्षरता तक असमान पहुँच महिलाओं की शैक्षणिक, आर्थिक तथा सामाजिक सहभागिता को सीमित कर सकती है। इसके अतिरिक्त साइबर बुलिंग, ऑनलाइन उत्पीड़न, निजी सूचनाओं का दुरुपयोग तथा डीपफेक जैसी समस्याएँ महिलाओं की निजता, सुरक्षा एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के समक्ष नई चुनौतियाँ प्रस्तुत करती हैं (सुमन, 2024)।
- **अवैतनिक घरेलू एवं देखभाल श्रम की उपेक्षा:** परिवार के सदस्यों की देखभाल, बच्चों के पालन-पोषण तथा घरेलू कार्यों में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान होने के बावजूद इस श्रम का अधिकांश भाग अवैतनिक रहता है। इसके आर्थिक मूल्य को पारंपरिक सकल घरेलू उत्पाद की गणना में प्रत्यक्ष रूप से शामिल नहीं किया जाता। घरेलू उत्तरदायित्वों का असमान वितरण महिलाओं की शिक्षा, रोजगार, अवकाश तथा सार्वजनिक जीवन में सहभागिता के अवसरों को प्रभावित करता है।
- **कानूनी प्रावधानों एवं क्रियान्वयन के मध्य अंतराल:** घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 तथा कार्यस्थल पर महिलाओं का लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषेध और

प्रतिषेध) अधिनियम, 2013 जैसे विधायी प्रावधानों के बावजूद प्रभावी क्रियान्वयन, संस्थागत जवाबदेही, कानूनी जागरूकता एवं न्याय तक सुगम पहुँच सुनिश्चित करना आवश्यक है। सामाजिक दबाव, आर्थिक निर्भरता तथा शिकायत निवारण तंत्र की सीमाएँ महिलाओं को उपलब्ध कानूनी संरक्षण का लाभ प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न कर सकती हैं।

इस प्रकार समकालीन भारतीय नारीवादी चिंतन के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ केवल लैंगिक असमानता तक सीमित नहीं हैं, बल्कि जाति, वर्ग, आर्थिक संसाधनों, सामाजिक संरचनाओं तथा संस्थागत व्यवस्थाओं से भी गहराई से जुड़ी हुई हैं। इन चुनौतियों का समाधान संवैधानिक अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन, शिक्षा एवं आर्थिक अवसरों के विस्तार, सामाजिक जागरूकता तथा निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में महिलाओं की समान एवं स्वतंत्र सहभागिता से संबंधित है। समावेशी नारीवादी दृष्टिकोण विभिन्न सामाजिक समुदायों की महिलाओं के विशिष्ट अनुभवों को मान्यता देते हुए लैंगिक न्याय, मानवीय गरिमा एवं लोकतांत्रिक समानता की स्थापना पर बल देता है।

## निष्कर्ष

आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन में नारीवाद का विकास केवल सामाजिक सुधारों तक सीमित न रहकर लैंगिक समानता, महिला स्वायत्तता, संवैधानिक अधिकारों एवं सामाजिक न्याय की व्यापक वैचारिक प्रक्रिया के रूप में हुआ है। उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधार आंदोलनों से प्रारंभ होकर राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम तथा स्वातंत्र्योत्तर भारत के संवैधानिक एवं सामाजिक आंदोलनों तक नारीवादी चिंतन ने महिलाओं की स्थिति, अधिकारों और राजनीतिक सहभागिता से संबंधित प्रश्नों को नई दिशा प्रदान की है। इस वैचारिक विकासक्रम में राजा राममोहन राय, सावित्रीबाई फुले, पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे, महात्मा गांधी, डॉ. भीमराव आंबेडकर, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया और पेरियार जैसे विचारकों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से स्त्री-शिक्षा, सामाजिक समानता, पितृसत्तात्मक संरचनाओं के प्रतिरोध तथा महिला अधिकारों के विस्तार में योगदान दिया। जहाँ प्रारंभिक समाज सुधारकों ने स्त्री-शिक्षा एवं सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन पर बल दिया, वहीं गांधी ने महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता को व्यापक आधार प्रदान किया। आंबेडकर एवं पेरियार ने जाति व्यवस्था, धार्मिक रूढ़ियों तथा पितृसत्ता के अंतर्संबंधों को रेखांकित करते हुए स्त्री-मुक्ति के प्रश्न को सामाजिक न्याय से जोड़ा।

भारतीय संविधान ने समानता, स्वतंत्रता, गरिमा एवं राजनीतिक सहभागिता के अधिकारों के माध्यम से नारीवादी चिंतन को संस्थागत आधार प्रदान किया है। तथापि, संवैधानिक प्रावधानों एवं विधायी सुधारों के बावजूद महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, आर्थिक निर्भरता, लैंगिक वेतन-असमानता, पितृसत्तात्मक पूर्वाग्रह तथा निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में सीमित सहभागिता जैसी चुनौतियाँ विद्यमान हैं। समकालीन भारतीय नारीवादी विमर्श इन समस्याओं को जाति, वर्ग, धर्म, क्षेत्र एवं सामाजिक असमानताओं के अंतर्संबंधों के संदर्भ में समझने की आवश्यकता पर बल देता है। विशेष रूप से दलित, आदिवासी, ग्रामीण एवं अन्य वंचित समुदायों की महिलाओं के विशिष्ट अनुभवों को नारीवादी चिंतन में समुचित स्थान देना आवश्यक है।

निष्कर्षतः, आधुनिक भारतीय नारीवाद केवल महिलाओं के अधिकारों की प्राप्ति का आंदोलन नहीं, बल्कि सामाजिक संरचनाओं में समानता, स्वतंत्रता एवं न्याय की स्थापना से संबंधित व्यापक लोकतांत्रिक चिंतन है। इसकी समकालीन प्रासंगिकता महिलाओं की शिक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, डिजिटल सुरक्षा तथा प्राकृतिक संसाधनों पर न्यायसंगत अधिकार सुनिश्चित करने की आवश्यकता में निहित है। वास्तविक लैंगिक समानता की स्थापना के लिए संवैधानिक आदर्शों और सामाजिक व्यवहार के मध्य विद्यमान अंतर को समाप्त करना तथा महिलाओं की स्वतंत्र निर्णय-क्षमता, मानवीय गरिमा एवं समान अवसरों को सुनिश्चित करना आवश्यक है। इस प्रकार भारतीय नारीवादी चिंतन एक समतामूलक, न्यायपूर्ण एवं समावेशी लोकतांत्रिक समाज के निर्माण का महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है।

### संदर्भ सूची

1. अम्बेडकर, बी. आर., और कोड, यू. सी. (2022). डॉ० बी. आर. अम्बेडकर: जीवन वृत्ति एवं संघर्ष. डॉ० भीमराव रामजी अम्बेडकर और समान नागरिक संहिता: डॉ भीमराव रामजी अम्बेडकर एंड यूनिफॉर्म सिविल कोड, 65.
2. बसु, ए. (1995). फेमिनिज्म एंड नेशनलिज्म इन इंडिया, 1917-1947. जर्नल ऑफ विमेन्स हिस्ट्री, 7(4), 95-107.
3. चक्रवर्ती, डी. एस. के. (2018). विमेन्स राइट्स इन इंडिया: अ कॉन्स्टिट्यूशनल इनसाइट. प्रो.(डॉ.) एन.के. चक्रवर्ती (संपा.), जेंडर जस्टिस, 129-183.
4. रैना, जे. ए. (2017). फेमिनिज्म: एन ओवरव्यू. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च.
5. हार्ट, जे. (1965). नाइनटीन्थ-सेंचुरी सोशल रिफॉर्म: अ टोरी इंटरप्रिटेशन ऑफ हिस्ट्री. पास्ट एंड प्रेजेंट, (31), 39-61.
6. सिंह, के. के. (2006). विमेन्स एम्पावरमेंट इन रिलेशन टू द नेशनल पॉलिसी फॉर द एम्पावरमेंट ऑफ विमेन. विमेन्स वर्क, हेल्थ, एंड एम्पावरमेंट, 19-53.
7. लावण्या, ए. (2023). नारी शक्ति वंदन अधिनियम: अ पॉलिटिकल एम्पावरमेंट ऑफ विमेन. इश्यू 6 इंटरनेशनल जेनरल मैनेजमेंट एंड ह्यूमैनिटीज, 6, 1846.
8. कुमारी, पी., और देवीदास, आर. डी. (2025). स्वतंत्रता संग्राम के बाद महिला आंदोलन और समाज में महिलाओं का स्थान: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन. काव्य सेतु, 1(6), 179-185.
9. नायक, बी. एस., और तबस्सुम, एन. (2024). इम्पैक्ट ऑफ पितृसत्ता एंड जेंडर स्टीरियोटाइप्स ऑन वर्किंग विमेन. डायवर्सिटी एंड इनक्लूजन रिसर्च.

10. चुंडावत, एस. के. (2026). घरेलू हिंसा की पीड़ित महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन. ट्रांसफॉर्मेटिव एजुकेशन: अ मल्टीडिसिप्लिनरी जर्नल (टीईएमजे) ई-आईएसएसएन: 3117-8057, 2(2), 416-424.
11. सुमन, रेखा (2024). भारतीय समाज में सामाजिक असमानता के बदलते आयाम: शिक्षा, रोजगार एवं डिजिटल पहुँच के संदर्भ में एक अनुभवजन्य अध्ययन. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग साइंस एंड ह्यूमैनिटीज, 14(1), 73-82.

\*\*\*\*\*



**INTELLIGENTSIA**  
International Journal of Multidisciplinary Research